विचार बिन्दु

अज्ञानी होना मनुष्य का असाधारण अधिकार नहीं है बल्कि स्वयं को अज्ञानी जानना ही उसका विशेषाधिकार है। –राधाकृष्णन

कमेटी बनाओ, भर्ती टालो–कब तक?

राजस्थान में विश्वविद्यालयों की हालत लगातार बिगडती जा रही है। हजारों शिक्षक और कर्मचारी पद वर्षों से खाली पड़े हैं। विश्वविद्यालयों के कुलगुरु बार–बार राज्य सरकार से रिक्त पदों को भरने की अनुमति मांग रहे हैं और यह बता रहे हैं कि कर्मचारियों की भारी कमी के कारण विश्वविद्यालयों का शैक्षणिक, शोध और प्रशासनिक कामकाज प्रभावित हो रहा है। लेकिन सरकार की ओर से समाधान के बजाय अब एक नई समिति सामने आ गई है।

राज्यपाल ने प्रदेश के राज्य वित्त पोषित विश्वविद्यालयों में रिक्त पदों पर भर्ती के लिए प्रो. त्रिभुवन शर्मा की अध्यक्षता में छह सदस्यीय उच्चस्तरीय समिति गठित की है। समिति भर्ती प्रक्रिया में सुधार, नियमों में एकरूपता तथा अन्य राज्यों के विश्वविद्यालयों एवं भर्ती संस्थाओं द्वारा अपनाई जा रही प्रक्रियाओं का अध्ययन करेगी और एक माह में अपनी रिपोर्ट राज्यपाल को सौंपेगी।

सवाल सीधा है–क्या राजस्थान के विश्वविद्यालयों में भर्ती के नियम ही नहीं हैं?

यदि नियमों में कमी है तो उसे दूर किया जाए। यदि भर्ती प्रक्रिया में एकरूपता चाहिए तो उसका निर्णय लिया जाए। लेकिन यह बताने के लिए समिति बनाने की जरूरत क्यों पड़ी कि विश्वविद्यालयों में भर्ती कैसे की जाए? देश के विश्वविद्यालयों में दशकों से भर्ती हो रही है। विभिन्न विश्वविद्यालयों और भर्ती संस्थाओं की स्थापित प्रक्रियाएं हमारे सामने हैं। फिर राजस्थान को भर्ती की प्रक्रिया समझने के लिए एक और समिति की आवश्यकता क्यों पड़ गई?

असल समस्या भर्ती की प्रक्रिया नहीं, भर्ती की अनुमति है।

विश्वविद्यालयों के स्वीकृत पदों को भरने के लिए राज्य सरकार की अनुमति की अनिवार्यता ने पूरी व्यवस्था को जकड रखा है। विश्वविद्यालय अपने स्तर पर एक चपरासी का पद भी सृजित नहीं कर सकता। जब पद राज्य सरकार ने स्वीकृत किए हैं, जब उनकी आवश्यकता विश्वविद्यालयों को है और जब उनके लिए वित्तीय प्रावधान भी किया जाता है, तो फिर उन्हीं स्वीकृत पदों पर नियुक्ति के लिए सरकार की बार–बार अनुमति क्यों?

सरकार को इसका स्पष्ट उत्तर देना चाहिए।

क्या सरकार को विश्वविद्यालयों में शिक्षकों और कर्मचारियों की आवश्यकता दिखाई नहीं देती? क्या कुलगुरुओं के बार–बार भेजे गए पत्र सरकार तक नहीं पहुंचते? या फिर सरकार जानबूझकर इन पदों को खाली रखना चाहती है?

वर्ष 2000 से पहले कुलपतियों को स्वीकृत रिक्त पदों पर निर्धारित नियमों के अनुसार भर्ती प्रक्रिया शुरू करने की पर्याप्त स्वतंत्रता थी। विज्ञापन जारी होते थे, चयन समितियां गठित होती थीं, साक्षात्कार होते थे और योग्य उम्मीदवारों की नियुक्ति की जाती थी। बाद में विश्वविद्यालयों को के माध्यम से ऐसी व्यवस्था में बांध दिया गया कि सरकार की अनुमति के बिना कोई पद नहीं भरा जा सकेगा। इसके बाद से विश्वविद्यालयों की स्वायत्तता धीरे–धीरे कागजों तक सीमित होती गई।

आज प्रदेश के लगभग 32 वित्त पोषित विश्वविद्यालयों में हजारों पद खाली हैं। कई विश्वविद्यालयों में 75 से 80 प्रतिशत तक पद रिक्त बताए जा रहे हैं। ऐसे में एक और समिति बनाना स्वाभाविक रूप से यह सवाल खड़ा करता है किक्या यह समस्या के समाधान की कोशिश है या समस्या को कुछ और समय तक टालने का उपाय?

सरकारी व्यवस्था में समिति बनाना आसान है। समिति गठित कर दीजिए, रिपोर्ट का इंतजार कीजिए और तब तक पुरानी व्यवस्था चलती रहे। रिपोर्ट आने के बाद उस पर विचार के लिए दूसरी प्रक्रिया शुरू हो सकती है। फिर निर्णय कब होगा, इसका कोई निश्चित समय नहीं। इस तरह वर्षों से रिक्त पद वर्षों और महीनों की नई प्रतीक्षा में चले जाते हैं।

क्या विश्वविद्यालयों के पास इतना समय है?

महाराणा प्रताप कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, उदयपुर की स्थिति इस प्रशासनिक संकट का एक गंभीर उदाहरण है। विश्वविद्यालय में गैर–शैक्षिणक कर्मचारियों के 1,586 स्वीकृत पदों में केवल 481 पदों पर कर्मचारी कार्यरत हैं और 1,105 पद रिक्त हैं। यानी लगभग 70 प्रतिशत पद खाली हैं। शिक्षकों के 435 स्वीकृत पदों में केवल 91 पद भरे हुए हैं और लगभग 80 प्रतिशत पद रिक्त पड़े हैं।

यह केवल आंकड़ा नहीं है। इसके पीछे विश्वविद्यालय की शिक्षा और शोध व्यवस्था का संकट छिपा है।

राजस्थान के सबसे पुराने डेयरी एवं खाद्य प्रौद्योगिकी संस्थान को मात्र दो सहायक प्रोफेसरों के भरोसे चलाना पड़े तो इसे क्या कहा जाएगा? कृषि महाविद्यालय, डूंगरपुर में मात्र एक शिक्षक चार वर्षीय बी.एससी. कृषि पाठ्यक्रम चला रहा हो तो छात्रों को गुणवत्तापूर्ण शिक्षा और व्यावहारिक प्रशिक्षण कैसे मिलेगा? जब प्रयोगशालाओं में पर्याप्त शिक्षक नहीं होंगे, तो शोध कौन करेगा? जब खेतों में पर्याप्त वैज्ञानिक नहीं होंगे, तो किसानों तक आधुनिक कृषि तकनीक कौन पहुंचाएगा?

सरकार को यह समझना होगा कि खाली पद कोई प्रशासनिक आंकड़ा नहीं, बल्कि शिक्षा का खाली होता हुआ भविष्य हैं। विश्वविद्यालयों में शिक्षक नहीं होंगे तो कक्षाएं कौन लेगा? वैज्ञानिक नहीं होंगे तो शोध कौन करेगा? कर्मचारी नहीं होंगे तो प्रशासन कौन चलाएगा? कृषि वैज्ञानिक नहीं होंगे तो किसानों तक नई तकनीक कौन पहुंचाएगा? इसलिए अब समय समिति बनाने का नहीं, निर्णय लेने का है।

सरकार विश्वविद्यालयों से उत्कृष्टता चाहती है, लेकिन उन्हें शिक्षक तक देने को तैयार नहीं है। यह कैसी नीति है?

यह पीड़ा मेरे लिए केवल एक आंकड़ा या समाचार नहीं है। मैं स्वयं महाराणा प्रताप कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय का पेंशनर हूं। यह विश्वविद्यालय मेरे लिए केवल एक संस्था नहीं, बल्कि मेरी रोजी–रोटी, मेरी कर्मभूमि और मेरे जीवन की पहचान रहा है। इसी विश्वविद्यालय ने मुझे आगे बढ़ने का अवसर दिया और प्रोफेसर जैसे सम्मानित पद तक पहुंचाया। मैंने अपने जीवन के महत्वपूर्ण वर्ष इस विश्वविद्यालय की सेवा में लगाए हैं।

इसीलिए आज जब मैं अपने विश्वविद्यालय की यह दुर्दशा देखता हूं तो मन अत्यंत दुखी हो जाता है। जिस विश्वविद्यालय को हमने मेहनत, समर्पण और निष्ठा से आगे बढ़ते हुए देखा था, आज उसे शिक्षकों और कर्मचारियों की भारी कमी से जूझते देखना किसी भी पूर्व कर्मचारी के लिए पीड़ादायक है।सच कहूं तो आज विश्वविद्यालय की हालत देखकर रोना आता है।

जिस विश्वविद्यालय ने हजारों विद्यार्थियों को शिक्षा दी, किसानों तक कृषि तकनीक पहुंचाई और शोध के क्षेत्र में अपनी पहचान बनाई, यदि वही विश्वविद्यालय पर्याप्त शिक्षकों और कर्मचारियों के अभाव में अपनी मूल जिम्मेदारियां पूरी नहीं कर पा रहा है, तो यह केवल विश्वविद्यालय का संकट नहीं है। यह उन सभी लोगों की पीड़ा है जिन्होंने अपना जीवन इस संस्था के निर्माण में लगाया है।

कृषि विज्ञान केंद्रों की स्थिति में तो सरकारी अनुमति का औचित्य और भी गंभीर प्रश्न बन जाता है। इन केंद्रों के पदों का 100 प्रतिशत वित्तीय भार भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली द्वारा वहन किया जाता है। राज्य सरकार पर वेतन का वित्तीय भार नहीं है। यदि पद स्वीकृत हैं और आर्थिक भार भी राज्य सरकार पर नहीं है, तो फिर ऐसे पदों को भरने के लिए अतिरिक्त सरकारी अनुमति की आवश्यकता क्यों होनी चाहिए?

यह केवल लालफीताशाही नहीं, बल्कि व्यवस्था की प्राथमिकताओं पर सवाल है।

विश्वविद्यालयों की समस्या केवल भर्ती तक सीमित नहीं है। सेवानिवृत्त कर्मचारियों की पेंशन भी गंभीर संकट में है। कृषि विश्वविद्यालय, बीकानेर में लंबे समय से पेंशन बकाया रहने और महंगाई भत्ते का उचित भुगतान नहीं होने की शिकायतें हैं। जय नारायण व्यास विश्वविद्यालय के कर्मचारी भी पेंशन के लिए आंदोलन करने को मजबूर हुए हैं। पिछले डेढ़ दशक में पेंशन समस्या के समाधान के लिए अनेक समितियां बनीं, लेकिन स्थायी समाधान आज भी दिखाई नहीं देता।

इससे एक कड़वा सवाल पैदा होता है–क्या राजस्थान में समितियां समस्याओं का समाधान करने के लिए बनती हैं या समस्याओं को लटकाने के लिए?

यदि सरकार सचमुच विश्वविद्यालयों को मजबूत करना चाहती है तो उसे सबसे पहले कुलगुरुओं को वास्तविक प्रशासनिक स्वायत्तता देनी होगी। कोई पद सेवानिवृत्ति या अन्य कारण से रिक्त होते ही, यदि वह पद पहले से स्वीकृत है, तो कुलगुरु को निर्धारित नियमों और पारदर्शी चयन प्रक्रिया के अनुसार उसे भरने का अधिकार होना चाहिए। हर नियुक्ति के लिए सरकार की अनुमति की प्रतीक्षा करने की व्यवस्था विश्वविद्यालयों को पंगु बना रही है।

सरकार को यह समझना होगा कि खाली पद कोई प्रशासनिक आंकड़ा नहीं, बल्कि शिक्षा का खाली होता हुआ भविष्य हैं।

विश्वविद्यालयों में शिक्षक नहीं होंगे तो कक्षाएं कौन लेगा? वैज्ञानिक नहीं होंगे तो शोध कौन करेगा? कर्मचारी नहीं होंगे तो प्रशासन कौन चलाएगा? कृषि वैज्ञानिक नहीं होंगे तो किसानों तक नई तकनीक कौन पहुंचाएगा?

इसलिए अब समय समिति बनाने का नहीं, निर्णय लेने का है।

नई समिति यदि वास्तव में उपयोगी बनना चाहती है तो उसे केवल यह नहीं बताना चाहिए कि भर्ती कैसे की जाए। उसे यह भी स्पष्ट करना चाहिए किस्वीकृत पदों को भरने के लिए सरकार की अनावश्यक अनुमति की व्यवस्था कब और कैसे समाप्त होगी। उसे विश्वविद्यालयों की स्वायत्तता बहाल करने की समयबद्ध सिफारिश करनी चाहिए।

और सरकार को भी इस बार केवल रिपोर्ट स्वीकार करके संतुष्ट नहीं होना चाहिए। रिपोर्ट पर निश्चित समय सीमा में निर्णय होना चाहिए और रिक्त पदों पर भर्ती की प्रक्रिया तत्काल शुरू होनी चाहिए।

क्योंकि राजस्थान के विश्वविद्यालय अब और प्रयोग सहन करने की स्थिति में नहीं हैं।

समितियां बहुत हो चुकीं। रिपोर्टें बहुत हो चुकीं। आश्वासन भी बहुत हो चुके। अब विश्वविद्यालयों को समिति नहीं, शिक्षक चाहिए; कर्मचारी चाहिए; शोध चाहिए; पेंशन चाहिए और सबसे बढ़कर–निर्णय चाहिए।

कमेटी बनाओ, भर्ती टालो की नीति अब बंद होनी चाहिए। अब समय है–कमेटी नहीं, रिक्त पद भरो।

–अतिथि सम्पादक,
प्रोफेसर (डा.) पी. सी. कंठालिया,
पूर्व विभागाध्यक्ष (मृदा विज्ञान) एवं मुख्य वैज्ञानिक,
महाराणा प्रताप कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, उदयपुर

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 : नीतिगत भटकाव, प्रशासनिक विफलता और नई नीति की आवश्यकता

प्रोफेसर अशोक कुमार

किसी भी राष्ट्र के विकास, उसकी सामाजिक समरसता और आर्थिक प्रगति का सबसे मजबूत आधार उसकी शिक्षा व्यवस्था होती है। भारत ने वर्ष 2020 में तीन दशकों के लंबे अंतराल के बाद अपनी राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 की घोषणा की थी। इस नीति का उद्देश्य रट्टा मार प्रणाली को खत्म करना, व्यावहारिक ज्ञान को बढ़ावा देना, मातृभाषा में प्राथमिक शिक्षा प्रदान करना और उच्च शिक्षा का वैश्विक स्तर पर आधुनिकीकरण करना था।

नीति को लागू हुए आधा दशक बीत चुका है। इसके कई सकारात्मक और दूरदर्शी प्रस्तावों के बावजूद, आज जमीनी हकीकत पर इसके क्रियान्वयन की गति, संसाधन और ढांचागत कमियाँ इसकी सफलता पर गंभीर प्रश्नचिह्न खड़े करती हैं। भारत जैसी विशाल और विविधतापूर्ण जनसांख्यिकी वाले देश में क्या यह नीति अपने उद्देश्यों में सफल रही है, या अब समय आ गया है कि हम इसके फेलियर यानी विफलताओं का ईमानदारी से मूल्यांकन करें और एक वैकल्पिक शिक्षा नीति के रोडमैप पर विचार करें?

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 का वर्तमान धरातल : विफलता या व्यावहारिक बाधाएँ? राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 को कागज़ पर एक बेहद प्रगतिशील दस्तावेज़ माना गया, लेकिन इसे लागू करते समय भारतीय शिक्षा व्यवस्था की बुनियादी कमियों को नज़रअंदाज़ कर दिया गया। इसकी विफलता के प्रमुख कारण निम्नलिखित बिंदुओं में देखे जा सकते हैं:–

डिजिटल और बुनियादी ढांचे की भारी खाई, नीति में ऑनलाइन शिक्षा, डिजिटल लर्निंग और कोडिंग जैसी आधुनिक विधाओं पर बहुत ज़ोर दिया गया। लेकिन कड़वी सच्चाई यह है कि भारत के ग्रामीण और अर्ध–शहरी इलाकों के सरकारी स्कूलों में आज भी बिजली, चालू कंप्यूटर और हाई–स्पीड इंटरनेट जैसी बुनियादी सुविधाएँ तक उपलब्ध नहीं हैं। जब देश के एक बड़े हिस्से के पास बुनियादी डिजिटल संसाधन ही नहीं हैं, तो डिजिटल शिक्षा पर अत्यधिक निर्भरता ने अमीर और गरीब बच्चों के बीच की शैक्षणिक दूरी को और चौड़ा कर दिया है।

बजटीय आवंटन की भारी कमी राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में यह वादा किया गया था कि शिक्षा पर कुल जीडीपी का 6 प्रतिशत खर्च किया जाएगा। कोठारी आयोग (1966) के समय से ही यह मांग की जा रही है। लेकिन हकीकत यह है कि आज भी भारत का शिक्षा बजट जीडीपी के 3 प्रतिशत से 3.5 प्रतिशत के आसपास ही सिमटा हुआ है। पर्याप्त बजट के बिना नई प्रयोगशालाएँ बनाना, स्कूलों का आधुनिकीकरण करना और शिक्षकों को प्रशिक्षित करना केवल एक कोरी कल्पना बनकर रह गया है।

बहु–विषयक दृष्टिकोण बनाम संसाधनों का अभाव उच्च शिक्षा में मल्टीपल एंट्री और एग्जिट (जब चाहें पढ़ाई छोड़ें या दोबारा शुरू करें) और बहु–विषयक दृष्टिकोण का स्वागत किया गया। लेकिन व्यावहारिक रूप से, हमारे अधिकांश कॉलेजों के पास न तो पर्याप्त संकाय हैं और ना ही बुनियादी ढांचा कि वे एक ही समय में विज्ञान, कला और संगीत के सैकड़ों संयोजनों को संभाल सकें। इसके परिणामस्वरूप छात्रों में भ्रम की स्थिति पैदा हुई है और डिग्रियों के मूल्यांकन का स्तर गिरा है।

भाषा विवाद और राज्यों की स्वायत्तता पर चोट प्राथमिक शिक्षा को मातृभाषा या क्षेत्रीय भाषा में देने का विचार सराहनीय है, लेकिन भारत जैसे बहुभाषी देश में जहां लोग नौकरियों के लिए एक राज्य से दूसरे राज्य में प्रवास करते हैं, वहां इसे लागू करना बेहद जटिल है। इसके अलावा, शिक्षा समवर्ती सूची का विषय है। कई राज्यों का आरोप है कि केंद्र सरकार ने राज्यों को विश्वास में लिए बिना इस नीति को ऊपर से थोप दिया है, जिससे संघीय ढांचे में असंतोष पैदा हुआ है।

एक वैकल्पिक शिक्षा नीति का रोडमैप यदि हम वर्तमान नीति की कमियों को दूर कर एक नई वैकल्पिक शिक्षा नीति की कल्पना करें, तो उसका स्वरूप केवल आधुनिक दिखने पर नहीं, बल्कि जड़ों से जुड़ने और समावेशी होने पर केंद्रित होना चाहिए। एक आदर्श वैकल्पिक नीति में निम्नलिखित पाँच स्तंभ होने आवश्यक हैं:–

केंद्रीकरण के बजाय विकेंद्रीकरण, भारत के हर राज्य की भौगोलिक, सांस्कृतिक और आर्थिक स्थिति अलग है। केरल की शैक्षणिक ज़रूरतें बिहार से भिन्न हैं और पूर्वोत्तर राज्यों की समस्याएँ राजस्थान से अलग हैं। वैकल्पिक नीति में दिल्ली से नीतियाँ बनाकर पूरे देश पर लागू करने के बजाय, जिला और राज्य स्तर पर शिक्षा बोर्डों को अपनी नीतियाँ और पाठ्यक्रम तय करने की पूर्ण स्वायत्तता होनी चाहिए।

शिक्षक को व्यवस्था के केंद्र में लाना , राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 तकनीक पर बहुत अधिक भरोसा करती है, लेकिन कोई भी स्क्रीन एक अच्छे शिक्षक का स्थान नहीं ले सकती। हमारी वैकल्पिक नीति का सबसे बड़ा निवेश शिक्षक प्रशिक्षण पर होना चाहिए। बीएड जैसे पाठ्यक्रमों की गुणवत्ता सुधारनी होगी और शिक्षकों से शिक्षण के अलावा कराए जाने वाले गैर–शैक्षणिक कार्यों (जैसे चुनावी ड्यूटी, जनगणना आदि) को पूरी तरह बंद करना होगा ताकि वे अपना 100 प्रतिशत समय बच्चों को दे सकें।

रटने और क्रेडिट सिस्टम के बजाय व्यावहारिक कौशल ,वर्तमान व्यवस्था में बच्चों को केवल परीक्षा पास करने और क्रेडिट जुटाने की होड़ में लगा दिया गया है। वैकल्पिक नीति के तहत कक्षा 6 के बाद से ही केवल थ्योरी के बजाय 50 प्रतिशत समय व्यावहारिक कौशल (जैसे– कृषि तकनीक, कोडिंग, स्थानीय शिल्प, इलेक्ट्रॉनिक्स, वित्तीय साक्षरता) को दिया जाना चाहिए। परीक्षा प्रणाली को साल के अंत में तीन घंटे के तनाव के बजाय, पूरे साल के व्यावहारिक प्रदर्शन के आधार पर आंका जाना चाहिए।

वित्तीय रूप से बाध्यकारी कानून, जब तक बजट नहीं बढ़ेगा, कोई भी नीति सफल नहीं हो सकती। वैकल्पिक नीति के तहत एक कानूनी ढांचा तैयार होना चाहिए जिसके तहत केंद्र और राज्य सरकारों के लिए यह अनिवार्य हो कि वे अपने कुल बजट का एक निश्चित और बड़ा हिस्सा (जीडीपी का न्यूनतम 6 प्रतिशत) शिक्षा के लिए आरक्षित रखें। इसमें भी प्राथमिक और माध्यमिक शिक्षा के बुनियादी ढांचे (शौचालय, साफ पानी, बिजली, सुरक्षित भवन) को प्राथमिकता मिलनी चाहिए।

समावेशी और समतावादी शिक्षा, वैकल्पिक नीति में निजी स्कूलों के बेतरतीब व्यावसायीकरण पर लगाम लगाना बेहद जरूरी है। समान स्कूल प्रणाली की दिशा में कदम बढ़ाना होगा, जहाँ अमीर और गरीब का बच्चा एक ही छत के नीचे गुणवत्तापूर्ण शिक्षा पा सके। इसके साथ ही, विशेष आवश्यकता वाले बच्चों और हाशिए पर मौजूद समुदायों के लिए विशेष छात्रवृत्ति और मेंटरशिप कार्यक्रम को अनिवार्य रूप से जमीनी स्तर पर लागू करना होगा।

आगे की राह, राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 की मंशा पर संदेह नहीं किया जा सकता; इसके विज़न डाक्यूमेंट में कई बेहतरीन बातें शामिल हैं। परंतु, किसी भी नीति की महानता इस बात से नहीं मापी जाती कि वह कागज़ पर कितनी भव्य दिखती है, बल्कि इससे मापी जाती है कि वह देश के अंतिम छोर पर बैठे बच्चे के जीवन में क्या बदलाव ला रही है।

वर्तमान परिस्थितियों में ऐसा प्रतीत होता है कि राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 की महत्वाकांक्षाएँ हमारे देश के यथार्थ से बहुत आगे निकल गईं, जिससे एक बड़ा अंतर पैदा हो गया है। आज हमें एक ऐसी वैकल्पिक और व्यावहारिक नीति की आवश्यकता है जो ऊंचे–ऊंचे दावों के बजाय बुनियादी ढांचे को मजबूत करने, राज्यों को अधिकार देने और शिक्षकों को सशक्त बनाने पर केंद्रित हो। शिक्षा को उत्पाद और छात्र को उपभोक्ता बनाने के बजाय, इसे एक सामाजिक जिम्मेदारी के रूप में देखा जाना चाहिए। तभी हम वास्तव में एक सशक्त, जागरूक और आत्मनिर्भर राष्ट्र का निर्माण कर पाएंगे।

–प्रोफेसर अशोक कुमार,
पूर्व कुलपति कानपुर,
गोरखपुर विश्वविद्यालय

मानसून के बूढ़े होने का प्रकृति ने दिया संकेत

डॉ. कमलेश शर्मा

मानसून अब विदाई की ओर है... आसमान में बादलों की आवाजाही भले जारी हो, लेकिन प्रकृति ने मौसम बदलने का अपना संदेश दे दिया है। जयपुर–कूकस रोड के आसपास इन दिनों दूर तक फैले कांस के सफेद फूल मानो धरती पर बिछी चांदी की चादर नजर आ रहे हैं। पहाड़ियों की हरी पृष्ठभूमि के बीच सफेद कांस का यह विस्तार ऐसा दृश्य रच रहा है, जिसे देखते ही निगाहें ठहर जाती हैं। कांस के फूलों का खिलना भारतीय लोक–परंपरा में लंबे समय से वर्षा ऋतु की विदाई और शरद ऋतु के आगमन से जोड़ा जाता रहा है। इसकी खूबसूरती का वर्णन गोस्वामी तुलसीदास ने रामचरितमानस में भी किया है

विगत शरद रितु आई, देखहूं लक्ष्मण परम सुहाई।
फूले कास सकल मही छाई, जनु बरसा कृत प्रकट बुढ़ाई।।

अर्थात शरद ऋतु आ गई है। कांस के फूलों से पूरी धरती ढक गई है। ऐसा लगता है जैसे वर्षा ऋतु अब बूढ़ी हो चुकी है और अपनी विदाई का संकेत दे रही है।

जहां आमतौर पर झुंड छोटे होते हैं, वहां सफेद मैदान

कांस की खासियत यह है कि यह सामान्यत: किसी खेत की तरह व्यवस्थित तरीके से नहीं उगता। खाली पड़ी जमीन, सड़क किनारे की जगह, नदी–नालों के आसपास या नम मिट्टी वाले खुले क्षेत्रों में यह स्वत: उगने वाला घास कुल का पौधा है। सामान्य परिस्थितियों में इसके पौधे छोटे–छोटे समूहों में दिखाई देते हैं।

लेकिन कूकस रोड के आसपास का दृश्य कुछ अलग है। यहां कई स्थानों पर कांस इतनी बड़ी संख्या में फैला हुआ है कि पहली नजर में लगता है मानो किसी ने इसकी बाकायदा खेती कर दी हो। कई जगह सफेद फूलों का विस्तार दूर तक नजर आता है और हरी पहाड़ियों के बीच यह पूरा क्षेत्र एक प्राकृतिक लैंडस्केप जैसा दिखाई देता है।

कांस असल में क्या है?

कांस का वैज्ञानिक नाम ऐंमर्म्ल्स ज्द्हैंहाल्स है। अंग्रेजी में इसे Wild Sugarcane यानी जंगली गन्ना कहा जाता है। यह Poaceae (घास कुल) का पौधा है और गन्ने की ही वंशावली से संबंधित है।

हालांकि इसे सामान्य गन्ने की तरह मीठे रस या चीनी उत्पादन के लिए नहीं उगाया जाता। यह एक बहुवर्षीय घास है, जो भूमिगत तनों यानी राइजोम के माध्यम से फैल सकती है। अनुकूल परिस्थितियां मिलने पर यह खाली जमीन पर तेजी से अपना विस्तार कर लेती है। कांस की एक खास विशेषता यह भी है कि यह कई तरह के चरने वाले पशुओं के लिए पसंदीदा चारा नहीं है। इसी कारण जहां दूसरी वनस्पतियां चराई के कारण कम हो जाती हैं, वहां कांस को फैलने का अवसर मिल सकता है।

बीज से ज्यादा जमीन के भीतर फैलता है साम्राज्य

कांस के फूल भले ऊपर दिखाई देते हों, लेकिन इसकी असली ताकत जमीन के नीचे होती है। इसके राइजोम मिट्टी के भीतर फैलते हैं और उनसे नए पौधे निकलते रहते हैं। यही कारण है कि एक बार अनुकूल परिस्थितियां मिलने पर कांस किसी क्षेत्र में बड़े पैमाने पर फैल सकता है। मानसून के दौरान पर्याप्त नमी मिलने के बाद इसकी वृद्धि तेज होती है। मौसम के आगे बढ़ने पर पौधे पर सफेद, रेशमी फूलों जैसे पुष्पक्रम (inflorescence) निकलते हैं। हवा चलने पर ये महीन सफेद रेशे लहराते हैं और पूरा क्षेत्र धुंधले–सफेद रंग में बदल जाता है।

कांस का फूल वास्तव में फूल नहीं, पुष्पक्रम है

जिसे हम सामान्य भाषा में कांस का फूल कहते हैं, वह तकनीकी रूप से एक अकेला फूल नहीं बल्कि बहुत से छोटे–छोटे फूलों का पुष्पक्रम है। इसका यह सफेद, मुलायम और पंखदार रूप ही इसे इतना आकर्षक बनाता है। परिपक्व होने पर इसके बीजों के साथ महीन रोएं विकसित होते हैं, जो हवा के साथ दूर तक जा सकते हैं। इससे कांस को नए स्थानों तक फैलने में मदद मिलती है।

कभी गद्दों में भरते थे कांस के फूल

आज कांस का इस्तेमाल मुख्य रूप से प्राकृतिक दृश्य और पारिस्थितिकी तंत्र का हिस्सा होने के कारण दिखाई देता है, लेकिन ग्रामीण जीवन में कभी इसकी उपयोगिता भी थी। इसके सूखे मुलायम पुष्पक्रम और रेशेदार सामग्री का इस्तेमाल गद्दे, तकिए और अन्य घरेलू उपयोग की वस्तुओं में भराव सामग्री के रूप में किया जाता था। आधुनिक जीवनशैली और बाजार में उपलब्ध कृत्रिम तथा औद्योगिक सामग्री के बढ़ते इस्तेमाल के कारण कांस की यह पारंपरिक उपयोगिता लगभग समाप्त हो गई है।

सिर्फ खूबसूरती नहीं, पारिस्थितिकी में भी भूमिका

कांस को केवल मानसून की विदाई का प्रतीक मानना इसके महत्व को सीमित कर देगा। यह प्राकृतिक घासभूमि और नदी–तटीय पारिस्थितिकी तंत्र में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। इसकी जड़ें मिट्टी को बांधने में मदद करती हैं और वनस्पति आवरण भूमि के कटाव को कम करने में योगदान दे सकता है।

हालांकि किसी क्षेत्र में इसका अत्यधिक विस्तार हमेशा सकारात्मक नहीं माना जा सकता। यदि यह स्थानीय वनस्पतियों को पीछे छोड़कर बहुत तेजी से फैल जाए, तो वनस्पति समुदाय की संरचना प्रभावित हो सकती है। इसलिए कांस को उसके स्थानीय पारिस्थितिक संदर्भ में देखना ज्यादा उचित है।

फोटो में मौसम बदलने की कहानी

कूकस रोड पर खींची गई यह तस्वीर केवल फूलों की खूबसूरती ही नहीं दिखाती, बल्कि मौसम के संक्रमण की पूरी कहानी कहती है। एक तरफ पहाड़ों पर मानसून की हरियाली है, तो दूसरी तरफ उन्हीं पहाड़ियों के बीच सफेद कांस का विस्तार–मानो प्रकृति खुद बता रही हो कि बरसात का मौसम अब अपने अंतिम पड़ाव पर है और शरद दस्तक दे रही है।

हवा के साथ लहराते कांस के फूलों को देखकर तुलसीदास की सदियों पुरानी पंक्तियां आज भी उतनी ही जीवंत लगती हैं–

फूले कास सकल मही छाई...

मानो सचमुच बारिश की विदाई पर धरती ने सफेद चादर ओढ़ ली हो।

–डॉ. कमलेश शर्मा,
अतिरिक्त निदेशक
(प्रचार), पुलिस मुख्यालय

राशिफल शनिवार 12 सितम्बर, 2026

पंडित अनिल शर्मा

भाद्रपद मास, शुक्ल पक्ष, प्रतिपदा तिथि, शनिवार, विक्रम संवत 2083, उत्तरा फाल्गुनी नक्षत्र दिन 12:55 तक, शुभ योग दिन 3:09 तक, बव करण प्रात: 7:47 तक, चन्द्रमा आज कन्या राशि में संचार करेगा।

ग्रह स्थिति: सूर्य–सिंह, चन्द्रमा–कन्या, मंगल–मिथुन, बुध–कन्या, गुरू–कर्क, शुक्र–तुला, शनि–मीन, राहु–कुम्भ, केतु–सिंह

आज त्रिपुष्कर योग प्रात: 7:47 से दिन 12:55 तक है। यमघट योग दिन 12:55 से सूर्योदय तक है। आज बुध उदय पश्चिम में प्रात: 7:15 पर होगा। आज नक्त व्रत पूर्ण होगा। आज साम श्रावणी उपाक्रम (सामवेदियों की राखी) आज प्रथम प्रकाश उत्सव गुरू ग्रंथ साहिब (प्राचीन मत) है।

श्रेष्ठ चौघड़िया: शुभ 7:47 से 9:19 तक, चर 12:23 से 1:55 तक, लाभ–अमृत 1:55 से 5:00 तक।

राहुकाल: 9:00 से 10:30 तक, सूर्योदय 6:14, सूर्यास्त 6:32

मेष
परिवार में चल रहे आपसी मतभेद दूर होने लगेंगे। आपसी विवादों का निपटारा हो सकता है। स्वास्थ्य संबंधित चिन्ता दूर होगी। आवश्यक कार्यों के कारण बाहर जाना पड़ सकता है।

वृष
व्यावसायिक कार्यों पर ध्यान देना ठीक रहेगा। व्यावसायिक कार्यों में महत्वपूर्ण सफलता मिल सकती है। व्यावसायिक कार्यों को प्राथमिकता से करने का प्रयास करें।

मिथुन
घर–परिवार में महत्वपूर्ण कार्य सम्पन्न हो सकते हैं। परिवार में सुख–सुविधाओं में वृद्धि होगी। परिवार में उत्सव जैसा माहौल रहेगा।

कर्क
व्यावसायिक कार्यों से संबंधित यात्रा संभव है। नौकरीपेशा व्यक्तियों को मानसिक तनाव रहेगा। आर्थिक स्थिति ठीक रहेगी। परिवार में मन को प्रसन्न करने वाले संदेश प्राप्त होंगे।

सिंह
आर्थिक/वित्तीय मामलों के लिए दिन अच्छा रहेगा। आय–व्यय में संतुलन बना रहेगा। व्यावसायिक कार्यों से संबंधित वार्ता सफल रहेगी। घर–परिवार में सुख–शांति बनी रहेगी।

कन्या
व्यावसायिक कार्यों में व्यस्तता अभी बनी रहेगी। व्यक्तिगत प्रयासों से व्यावसायिक कार्य सुगमता से बनने लगेंगे। आर्थिक मामलों के लिए दिन अच्छा रहेगा।

तुला
घर–गृहस्थी के खर्चों में अनावश्यक वृद्धि हो सकती है। धन हानि का भय बना रहेगा। व्यावसायिक कार्यों के कारण भागदौड़ रहेगी। अनावश्यक व्यावसायिक खर्च होगा।

वृश्चिक
आर्थिक स्थिति में सुधार होगा। आय में वृद्धि होगी। अटका हुआ धन प्राप्त होगा। व्यावसायिक सफलता से मनोबल बढ़ेगा। धार्मिक स्थान की यात्रा संभव है।

धनु
व्यावसायिक कार्यों में आ रही समस्त अड़चनें दूर होने लगेंगी। अटके हुए कार्य बनने लगेंगे। आवश्यक कार्य शीघ्रता/सुगमता से बनने लगेंगे। महत्वपूर्ण कार्य योजना का क्रियान्वयन होगा।

मकर
व्यावसायिक कार्यों को प्राथमिकता से करने का प्रयास करें। व्यावसायिक कार्यों में सुगमता से उचित सफलता मिल सकती है। व्यावसायिक सुविधाओं में वृद्धि होगी। आर्थिक स्थिति ठीक रहेगी।

कुंभ
चन्द्रमा अष्टम भाव में शुभ नहीं है। शुभ कार्यों में व्यवधान हो सकता है। आवश्यक कार्यों में विलम्ब हो सकता है। बनते कार्य बिगड़ सकते हैं। यात्रा टालना ठीक रहेगा।

मीन
परिवार में धार्मिक कार्य सम्पन्न हो सकते हैं। परिवार में आपसी सहयोग–समन्वय बना रहेगा। परिवार में उत्सव जैसा माहौल रहेगा। व्यावसायिक/आर्थिक स्थिति ठीक रहेगी।